IOSR Journal Of Humanities And Social Science (IOSR-JHSS)
Volume 1, Issue 1 (Jan -Feb. 2011) 39-43
e-ISSN: 2279-0837, p-ISSN: 2279-0845.
www.iosrjournals.org

वैदिक वाङ्मय में खगोल विज्ञान

प्रो.राधाकान्त ठाकुर

वैदिक वाङ्मय में खगोल विज्ञान के इतने वचन उपलब्ध है कि यदि उन सबों को एकत्र किया तो खगोल विज्ञान का एक विपुल ग्रन्थ तैयार हो जायगा तथा उससे इस बिन्दु पर भी प्रकाश पडेगा कि ईस्वी पूर्व लगभग ६००० वर्ष पहले से हो खगोल विज्ञान में भारतीयों की क्या गवेषणा रही है।

यद्यपि वेदों में प्रसङ्ग अभाव के कारण खगोल वैज्ञानिक विषयों की चर्चा के अच्छे अवसर नहीं आये हैं, जिससे तत्कालीन खगोल वैज्ञानिक उपलब्धियों का अनुमान लगाना बहुत ही कठिन होता है, फिर भी वैदिक वाङ्मय के छिट फुट बिखरे हुए बचनों को बटोरने से मालूम होता है कि वैदिक काल में भी भारतीयों ने खगोल विज्ञान के सम्बन्ध में काफी अनसन्धान किया था खगोलीय ग्रह नक्षत्रों की गति, स्थिति आदि जानने के लिये बंदिक काल में कतिपय गणित निपुण विद्वान् वेध करते थे, यह वेदवचनों से ही सिद्ध होता है। जैसे-

"प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्शनम्।

यादसे गणकम्[१]**।।"**

विभिन्न पाश्चात्य विद्वानों का मत है कि राशिवृत्त के बारह विभागों के नाम मेष, वृष आदि वेदों में नहीं है, अतः इस कल्पना के लिये भारतीय विद्वान पाश्चात्यों के ऋणी हैं। किन्तु निम्नलिखित वचन को देखने से स्पष्ट होता है कि राशिचक्र के बारह विभागों एवं ३६० अंशों को कल्पना मूलतः भारतीयों की ही है। जैसे-

द्वादश प्रधयश्चक्रमेकं त्रीणि नाभ्यानि क उतच्चिकेत।

तस्मिन्साकं त्रिशता न शङ्कवोऽर्पिता षष्टिर्न चलाचलास:[२]॥"

उपर्युक्त वचन से भी सिद्ध होता है कि राशिचक्र अण्डाकार यानी दीर्घ वृत्ताकार है तथा उसकी तीन नाभियाँ हैं-

वैदिक वाङ्मय में सूर्य की गति, स्थिति आदि के सम्बन्ध में भी काफी सटीक वचन मिलते हैं। जैसे-

"आकृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च।

हिरण्येन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्[३]॥"

उपर्युक्त वचन से ज्ञात होता है कि वैदिक काल में यह पता था कि सूर्य सौर परिवार के सभी ग्रहों के साथ दूरी आदि का सम्बन्ध रखता हुआ तथा समस्त ग्रहलोकों को देखता यानी प्रकाशित करता हुआ जा रहा है। उपर्युक्त वचन से सिद्ध होता है कि सूर्य ही एक आत्म प्रकाशमान ग्रह है, जो अपने प्रकाश से समस्त भुवनों को प्रकाशित करता है। इस सम्बन्ध में वेदों की कतिपय जगहों पर चर्चा आयी है। जैसे-

"सौर्येणामुष्मिल्लोके ज्योतिर्धत्ते।

ज्योतिष्मन्तोऽस्मा इमे लोका भवन्ति[४]॥"

पुनः

"इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमम्[५]।।"

चन्द्रमा

वैदिक वाङ्मय में चन्द्रमा की चर्चा काफी आयी है। सूर्य के उदय होने पर नक्षत्रों का दर्शन ही नहीं हो पाता है, किन्तु प्रतिदिन चन्द्रमा के नये नये नक्षत्रों में उदय होने से आकाश में जिस तरह मनोहर दृश्य उपस्थित हो जाता है, ठीक उसी तरह मनोहर कथाओं की कल्पना भी वैदिक वाङ्मय में की गयी है। जैसे-

"यानि नक्षत्राणि दिव्यन्तरिक्षे अप्सु भूमौ यानि नगेषु दिसु।"

प्रकल्पयंश्चन्द्रमा यान्येति सर्वाणि ममैतानि शिवानि सन्तु॥"

अर्थात् अन्तरिक्ष, जल, क्षितिज, पर्वत से चोटी आदि स्थानों में आभासित होता हुआ चन्द्रमा जिन-जिन नक्षत्रों में गमन करता है, वे सभी नक्षत्र हमारे लिए कल्याणप्रद हो।

अमावस्या में उदयकालिक सूर्य की ओर बढ़ने हुए तथा शुक्लपक्ष की प्रतिपदा में सूर्य से आगे निकलते हुए चन्द्रमा को देखकर भी बहुत ही मोहक कल्पना की गयी है। जैसे-

"चन्द्रमा वा अमावस्यायामादित्यमनुप्रविशति।
आदित्याद्वै चन्द्रमा जायते[६]॥"

शुक्र

शुक्र का उदय कभी सायंकाल में पश्चिम में होता है, तो कभी प्रातः काल में पूरब में होता है। मङ्गल आदि पांचों ग्रहों में सब से अधिक प्रकाश वाला ग्रह शुक्र ही है। प्रातःकाल या सायंकाल में यदि शुक्र उदित हो, तो लोगों की नजर समस्त खगोल के बीच एक शुक्र बिम्ब पर ही सिमट जाती है। अतः वेदों में निम्नलिखित वचन आये हैं-

"तद्वा एष एव शुक्रो य एष तपति, तद्यद्।
एष एतत्पति तेनैष शुक्रचन्द्रमा मन्थी[७]।।"

पुनः-

"शुक्रज्योतिश्च चित्रज्योतिश्चः"

बृहस्पति

शुक्र सदा सूर्य के पास, उसके आगे पीछे रहता है। जब बृहस्पति एवं शुक्र के उदय प्रातः काल पूरब में होते हैं तो अकस्मात् लोगों को दृष्टि उन दोनों चमकते हुए बिम्ब पर जा गिरती है। किन्तु दिनानुदिन शुक्र के उदय से पहले ही गुरु का उदय होने लगता है, जिससे गुरु शुक्र से पश्चिम की ओर भागता हुआ समझने में आता है। कुछ ही दिनों के बाद जब शुक्र पूरब में लगता है, तो गुरु सम्पूर्ण आकाश को पारकर पश्चिम क्षितिज के पास दिखता है। इस तरह के शुक्र एवं बृहस्पति के योग एवं अन्तर को देखकर भी वेदों में बहुत मनोहर कल्पना की गयी है। जैसे-

"ईमान्यद्वपुषे वपुश्चक्रं रथस्य येमथुः।

पर्यन्या नाहुषा युगा मह्ना रजांसि दीयथः[८]॥"

अर्थात् हे अश्विनों! अपने रथ का एक तेजस्वी चक्र सूर्य के पास उसकी शोभा बढ़ाने हेतु रखा है दूसरे चक्र में आप लोकों की प्रदक्षिणा करते हैं। बृहस्पति के सम्बन्ध में स्पष्ट मन्त्र भी मिलते हैं। जैसे-

"बृहस्पतिः प्रथमञ्जायमानो महो ज्योतिषः परमे व्योमन्[९]।"

तथा-

"बृहस्पतिः प्रथमञ्जायमानो तिष्यं नक्षत्रमभिसम्बभूव[१०]।"

उपर्युक्त मन्त्र बृहस्पति के जन्म के सम्बन्ध में यानी आकाश में बृहस्पति के प्रथम ग्रह के रूप में चलते हुए देखकर कहे गये हैं।

वैदिक काल में अन्यान्य ग्रहों की भी जानकारी मिल गयी थी। साथ ही यह भी पता लग गया था कि किस ग्रह का कौनसा शुभ या अशुभ फल होता है। जैसे-

"शं नो ग्रहांश्चान्द्रमासाः शमादित्यश्च राहुणा।

शं नो मृत्यधूमकेतुः शं रुद्रास्तिग्मतेजसः[११]।।"

ग्रहगति

वैदिक वाङ्मय में आयें हुए वचनों के आधार पर अन्यान्य ग्रहों की गति का निश्चय करना बहुत ही दुर्लभ है। किन्तु स्पष्ट तौर पर हम कह सकते हैं कि वैदिककाल मे भी सूर्य एवं चन्द्रमा की गति का ज्ञान अवश्य था, जिसके आधार पर यज्ञ कर्म के लिये उपर्युक्त तिथि का निश्चय किया गया है। जैसे-

"या पूर्वा पौर्णमासी सानुमतियोंत्तरा सा राका।

या पूर्वामावास्या सा सिनीवाली योत्तरा सा कुहूः[१२]।।"

वस्तुतः वैदिक काल में खगोल विज्ञान के सम्बन्ध में काफी अन्वेषण किया गया है। वैदिक वाङ्मय में ग्रहों के प्रयुक्त नामों से जर्मन के प्रो.बेबर भी स्वीकार करते हैं कि **"ग्रहो के नाम से ज्ञात होता है कि हिन्दुओं ने उनका अन्वेषण स्वयं किया है[१३]।"**

उद्धरण-

१.वाजसनेयि संहिता

२.ऋ.सं.-१-१६४-४८

३.ऋ.सं.-१/३५/२

४.तै.सं.- ६-६-४

५.ऋ.सं.-१०/१७०/३

६.ऐत.ब्रा.-४-५

७.शत.वा.- ४/२/१

८.ऋ.सं.- ५/७३/१

९.ऋ.सं.-४/५०/४

१०.तै.ब्रा.- ३/१/१

११.अथ.सं.-१९/९

१२.ऐ.ब्रा.-३१/१०

१३.Weber's History of the Indian Literature. P. 251